ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol.-6* Issue-12*January- 2022
Innovation The Research Concept

भारतीय संस्कृति और साहित्य का आंतरिक संबंधः एक सिंहावलोकन

The Internal Relations of Indian Culture and Literature: An Overview

Paper Id: 15530,Submission Date: 10/01/2022, Date of Acceptance: 20/01/2022, Date of Publication: 24/01/2022

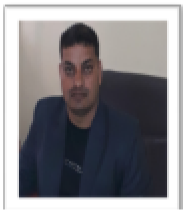

निर्भय शर्मा
असिस्टेंट प्रोफेसर,
हिंदी विभाग,
न्यू ग्रेट स्कालर्स
महाविद्यालय अल्हागंज,
शाहजहाँपुर,
उत्तर प्रदेश, भारत

सारांश

संस्कृति और साहित्य का संबंध आत्मा और शरीर जैसा कुछ है। एक के अभाव में दूसरे का अस्तित्व ही नहीं होता। संस्कृति अपने आप में बहुत ही व्यापकता लिऐ हुए है। भारतीय जनमानस को संस्कृति और साहित्य ने चारो ओर से आच्छादित किया है इसमें कोई संदेह नहीं है। भारतीय संस्कृति विश्व की श्रेष्ठतम संस्कृतियों मे से एक है। यह स्वयं में उत्कृष्ट जीवन मूल्यों, वैचारिक चिंतन एव दर्शन को आत्मसात किए हुए है। अतः स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि वही राष्ट्र अपने आप में पूर्ण है जिसकी सभ्यता और संस्कृति जीवित है। किसी भी राष्ट्र के इतिहास की साक्षी वहाँ की जीवंत संस्कृति और साहित्य ही होता है। इस संदर्भ में हमारे राष्ट्र का कोई सानी नहीं है। समाज की परिकल्पना हेतु मानव जीवन में शिक्षा की महती भूमिका होती है। एक सच्चा साधक शिक्षा और साहित्य के द्वारा ही समाज को नवीनता प्रदान करने की ऊँचाईया गढ़ता है। सृजनधर्मिता एवं कल्पना को साकार रूप देते हुए वह नवीनतम साहित्य को रचते हुए मानव कल्याण में सदैव तत्पर रहता है।

The relation of culture and literature is something like soul and body. In the absence of one the other would not exist. Culture itself is very comprehensive. There is no doubt that the Indian public has been covered by culture and literature from all sides. Indian culture is one of the best cultures in the world. It is imbibing excellent life values, ideological thinking and philosophy in itself. Therefore, it can be clearly said that that nation is complete in itself whose civilization and culture is alive. The witness to the history of any nation is its vibrant culture and literature. Our nation has no match in this regard. Education plays an important role in human life for the concept of society. A true seeker builds the heights of providing innovation to the society only through education and literature. While giving the form of creativity and imagination, he is always ready for the welfare of human beings while composing the latest literature.

मुख्यशब्दः समरसता, परिवेश, अवधारणा, संस्कृति, सद्भाव, समन्वय, आयाम, समावेश, संक्रमण, संरक्षित

Keywords: Harmony, Surroundings, Concept, Culture, Harmony, Coordination, Dimension, Inclusion, Transition, Preserved

प्रस्तावना

शिक्षा और साहित्य का वास्तविक मंत्र होता है समाज को सद्मार्ग की ओर ले जाना, सद्चरित्र निर्माण करना, ध्येय को सकारात्मकता प्रदान करना तथा समाज में समरसता कायम रखना। समाज के प्रत्येक व्यक्ति का यह धर्म होना चाहिए कि वह समाज में व्याप्त कुरीतियों, बाहृय आडंबरों को दूर करके एक उच्चकोटि की मानसिकता का परिचय दे। जिस प्रकार एक जलते हुए दीपक की लौ अपने चारो ओर आलोक बिखेर कर दूसरों को आलोकित करके स्वयं निस्तेज हो जाती है ठीक यही कुछ सोच एक सच्चे तत्व ज्ञानी की होनी चाहिए। जिस प्रकार से पृथ्वी के गर्भ में बोया हुआ एक दाना स्वयं का अस्तित्व मिटाकर दूसरों के हितार्थ अन्न की राशि के रूप में परिवर्तित होकर लोगों को जीवन प्रदान करता है ठीक उसी प्रकार हम शिक्षित होने के पश्चात् भी दूसरों के काम न आ सके तो हमारी सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था पर एक प्रश्न चिन्ह खड़ा हो जाता है। इस संदर्भ में डा0 रामसजन पाण्डेय का विचार है - 'संस्कृति से मनुष्य सज-सँवरकर, आनंदित होकर दूसरे को प्रसन्न - प्रमुदित कर उदात्त मानवीय पथ पर अग्रसर होता है।'[1]

आज के निरंतर बदलते हुए परिवेश में मनुष्य को बहुत ही सजग एवं पवित्र दृष्टिकोण रखने की आवश्यकता है। इसके लिए साबुन-पानी की आवश्यकता नहीं पड़ती बल्कि दृढ़ निश्चय एवं सकारात्मक सोच की। इसके साथ ही अन्तःकरण की शुद्धि एवं मन-इन्द्रियों को वश में कर लेना अपने आप में बहुत बड़ी जीत है, क्योंकि इस संबंध में कहा गया है - 'मन के मते न चालिए, मन के मते अनेक।' कहने का तात्पर्य यह है कि यदि मन की बात सुनी और उसी के अनुरूप आचरण किया तो आप न घर के रहेंगे और न घाट के। रावण महापण्डित होकर भी मन और इन्द्रियों को वश में नहीं रख सका और अन्ततः उसे पराजय का मुँह देखना पड़ा। वहीं मर्यादा

पुरूषोत्तम श्रीराम का मन और इन्द्रियों पर पूर्णतयः अधिकार था और इसीलिए रावणत्व पर रामत्व की विजयश्री हुई। यह विजय रावण पर राम की नहीं थी अपितु असत्य पर सत्य की विजय थी। वर्तमान में भी न जाने कितने छल-छद्म रूपी राम-रावण युद्ध नित्य प्रति चलते रहते हैं लेकिन विजयश्री उन्हीं लोगों का वरण करती है जो दृढ़ निश्चयी होते हैं। अहंकारी, आततायी एवं क्रूर शासक का पर्याय रहे कंस को भी श्रीकृष्ण ने सद्गति प्रदान की क्योंकि अहंकारी प्रवृत्ति वालों का यही एकमात्र परिणाम होता है। हम सभी को भारतीय संस्कृति के ' जियो और जीने दो' वाले वाक्य की अवधारणा को जीवंत रखना होगा इसी में हम सबका कल्याण निहित है। संस्कृति की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए डा0 वासुदेव शरण अग्रवाल लिखते हैं - 'संस्कृति मूलतः एक संप्रत्यय है, किसी गोचर वस्तु अथवा पदार्थ का सूचक नहीं। इसलिए संस्कृति के जितने भी अर्थ मिलते हैं, वे सभी' संस्कृति संप्रत्यय' को विभिन्न दृष्टिकोणों से स्पष्ट करने का प्रयास-मात्र है। अतः संस्कृति को किसी परिभाषा में बाँध पाना बड़ा मुश्किल काम है। मानव ने अपने लिए अनेक मार्गो का विधान बनाया, उसकी वह कर्मसृष्टि भी मानवीय संस्कृति का महत्वपूर्ण अंश है। प्राणों की शक्ति का कर्ममय पराक्रम मानव की अपूर्व उपलब्धियों का क्षेत्र रहा है, उसमें जो धर्म और नीति की उदात्त प्रेरणा निहित है, वह संस्कृति का अंश है। इस प्रकार दर्शन, धर्म, साहित्य, जीवन और कला के क्षेत्र में मनुष्य की समस्त कृतियाँ और रचनाएँ उसकी संस्कृति हैं। संस्कृति जीवन के वृक्ष का संवर्धन करने वाला रस है।[2] भारतीय संस्कृति में धर्म हानि सबसे बड़ी हानि मानी गई है। इसलिए पौराणिक ग्रन्थों में यह माना गया है कि जब-जब भी भारत में धर्म पर आँच आई है, तब-तब दैवीय शक्तियों ने धर्म स्थापना हेतु अवतार लिए हैं। इस संदर्भ में कहा भी गया है-

जब-जब होई धरम की हानि, बाढ़हि असुर अधम अभिमानी।

तब-तब प्रभु धरि विविध सरीरा, हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा॥

संस्कृति के संबंध में महादेवी वर्मा का मानना है कि-'संस्कृति मानव चेतना का ऐसा विकास क्रम है, जो उसके अंतरंग और बहिरंग को परिष्कृत करके विशेष जीवन-पद्धति का सृजन करती है। संस्कृति मानव-चेतना की प्राकृतिक उर्ध्वगति का प्रकाशन है। मानव की अन्तः भूमि और प्रसुप्त विशेषताओं की परिष्कृति और अभिव्यक्ति है।'[3] इस बदलते हुए सामाजिक-सांस्कृतिक परिदृश्य में परोपकार की भी अहम् भूमिका होती है किसी गिरे हुए व्यक्ति को सहारा दे देना इस बात का सूचक है कि आप किसी दूसरे के हितार्थ एवं कल्याणार्थ तत्पर हैं। इस संदर्भ में डा0 हजारी प्रसाद द्विवेदी का कहना है-'संस्कृति मनुष्य की विविध साधनाओं की सर्वोत्तम परिणति है।'[4] शिक्षा का वास्तविक मूल्य लोगों के मनोमस्तिष्क से दूषित मानसिकता को दूर करना होता है और इसी क्षेत्र में हम सभी को कार्य करना चाहिए। इस संसार में प्रत्येक प्राणी को मन, बुद्धि और हृदय से भाव प्राप्त होते हैं लेकिन मन की बात मानने वाले लोग भँवर में फसते जाते हैं वहीं दूसरी ओर जो लोग बुद्धि और हृदय की सुनकर उसी के अनुरूप कार्य करते हैं। प्रायः ऐसे लोग ही अच्छे परिणाम की ओर उन्मुख होते है और ऐसे लोग ही आगे चलकर अनुकरणीय हो जाते हैं। संस्कृति की विशेषता को व्याख्यायित करते हुए रामधारी सिंह दिनकर कहते हैं-'संस्कृति जिंदगी का एक तरीका है और यह तरीका सदियों से जमा होकर उस समाज में छाया रहता है, जिसमें हम जन्म लेते हैं। इसलिए जिस समाज में हम पैदा हुए हैं अथवा जिस समाज में हम जी रहे हैं, उसकी संस्कृति हमारी है। संस्कृति वह चीज मानी जाती है, जो हमारे सारे जीवन को लिए हुए है तथा जिसकी रचना और विकास में अनेक सदियों के अनुभवों का हाथ है यही नहीं संस्कृति हमारा पीछा जन्म-जन्मांतर तक करती है।'[5]

संस्कृति का वैशिष्टय विश्व मानवता के लिए वरदान सिद्ध हुआ है इसमें कोई दोराय नहीं। इस संबंध में दिनकर जी का विचार है -'संस्कृति वस्तुतः एक ऐसा साधन है, जो मनुष्य को उच्चतम नैतिक शिक्षा तक ले जाती है। संस्कृति ही वह दर्पण है जिसमें समाज अथवा राष्ट्र के सभी आयाम नैतिक, सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक आदि प्रतिबिंबित होते हैं। वस्तुतः यह मानव-विकास की प्रथम सीढ़ी है। भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम संस्कृति है। अनेक पंथ, परंपराओं के सदगुणों को अपनाकर भारतीय संस्कृति श्रेष्ठ संस्कृति बन गई है। यह संस्कृति परस्पर सद्भाव, समन्वय और सर्वात्मभाव की उपदेशिका है, जिसमें विश्व भर की जातियों, वादों, विचारों और संस्कृतियों की स्त्रोतस्विनियों के अनुकरणीय गुण-आकार समा गए हैं। विभिन्न जातियों को एक महाजाति के साँचे में ढालने का प्रयास और अनेक वादों-विचारों और धर्मों के बीच एकता लाने का यह निराला ढंग सभी युगों में भारतीय संस्कृति की विशेषता रही है।'[6]

भारतीय संस्कृति की मूल अवधारणा उदारता, सहिष्णुता तथा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की है। यह वह विचारधारा है, जो अनेकता में एकता तथा असत् से सत् का अनुसंधान करती है। भारतीय संस्कृति देव नदी जाह्नवी के समान सतत् प्रवाहमान, सागर की तरह विशाल एवं अगाध, हिमालय पर्वत की तरह उत्तुंग शिखर के समान श्रेष्ठ और उदात्त है। ऋग्वेद का ऊर्जावान् मंत्र ' आ नो भद्राः यंतु विश्वतः '[7] यह तथ्य इस बात का प्रमाण है कि विश्व के लिए प्रत्येक दिशा से शुभ व कल्याणकारी स्पंदनों का

आधान करना चाहती है। संस्कृति निरंतर विकाशील है तथा सदैव गतिशील है। संस्कृति सदाचार एवं आचरण की शुद्धता पर बल देती है।

संस्कृति और साहित्य का संबंध कुछ आत्मा और शरीर जैसा है। जो कि दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं, एक के अभाव में दूसरे का अस्तित्व संकट में रहता है। सामाजिक परंपरा से युक्त व्यवहार का नाम ही संस्कृति है। भारतवर्ष में अनेक धर्म एवं संप्रदायों का सम्मिलन रहा है।इसीलिए संस्कृति भी सतत् विकासमान रही है। उसमें समन्वय की भावना का समावेश देखने को मिलता है। भारतीय संस्कृति की मान्यता है कि कर्म के अनुरूप फल प्राप्ति होती है वहीं, समुचित पुरूषार्थ द्वारा मोक्ष प्राप्त करने की भी बात कही गयी है। संस्कृति के निर्माण में प्रायः चार तत्वों का समावेश रहता है। वे हैं-धर्म, दर्शन,अध्यात्म और साहित्य कला। भारतीय संस्कृति के साथ-साथ विश्व में अनेक संस्कृतियाँ थीं लेकिन कालांतर में उनका अस्तित्व धीरे-धीरे समाप्त होता चला गया। इसके विपरीत भारतीय संस्कृति आज भी जीवंत हैं, विद्यमान है। इस संदर्भ में इकबाल की यह पंक्तियाँ कितनी प्रासंगिक बन पड़ी हैं-

यूनान, मिश्र, रोमा सब मिट गये जहाँ से, बाकी अभी है लेकिन नामोनिशां हमारा।

कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी, सदियों रहा है दुश्मन दौरे जहाँ हमारा॥

भारतीय संस्कृति में चार तरह के नायक माने गए हैं- धीरोदात्त, धीरलीलत, धीरप्रशांत और धीरोद्धत। इनमें धीर प्रशांत और धीरोदात्त आदर्श नायक हैं। भारतीय साहित्य में जितने भी नाटक एवं प्रबंधकाव्य लिखे गए हैं, उनमें आदर्शवादी चरित्रों को ही नायक की श्रेणी में रखा गया है। श्रीराम, श्रीकृष्ण, गौतम बुद्ध एवं महावीर आदि को भारतीय साहित्य में नायक रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। कला और साहित्य का स्वरूप सदैव से ही भारतीय संस्कृति में आदर्श रूप में प्रतिष्ठित करके पल्लवित किया गया है। भारतीय साहित्य में सदैव से ही काव्य एवं नाटकों की सर्जना सुखांत रूप में की गई है। असत्य पर सत्य की विजय कथानक को और अधिक सुखांत एवं आदर्शवादी बना देती है। साहित्य में संस्कृति एक बहुत ही महत्वपूर्ण अध्याय है। प्रत्येक राष्ट्र की अपनी एक संस्कृति होती है, जो कि उस राष्ट्र के साहित्य को यथासंभव सकारात्मक रूप से प्रभावित करने का काम करती है। मनुष्य जिस सांस्कृतिक विरासत की प्रक्रिया से गुजरता है उसके अन्तर्गत सामाजिक समूहों के चरित्र, मानवीय विचार एवं संवेदना, विश्वास और रीतियाँ एक विस्तृत आयाम निर्मित करती हैं। संस्कृति और आधुनिकता का चिर-परिचित संबंध है। परंपराओं का विकास आधुनिकता में भी होता है। भारतवर्ष की आधुनिकता और संस्कृति की आधुनिकता ने भारतीय साहित्य को बड़ी तेजी से प्रभावित किया है जिसके फल स्वरूप बीसवींशताब्दी में विचारधाराओं एवं वैचारिक आंदोलनों की एक बड़ी बाढ़ आयी है। इसने साहित्य एवं कलाओं को भी पूर्णतयः प्रभावित किया है। भारतवर्ष में आधुनिकता के अन्वेषण के लिए भारतीय धर्म, दर्शन और संस्कृति के विभिन्न आयामों का अध्ययन अनिवार्य सा हो जाता है लेकिन इसके लिए धर्म और इतिहास को जानना भी अत्यावश्यक है। वर्तमान में आधुनिकता सांस्कितक संक्रमण और संक्रान्ति की स्थिति से गुजर रही है। अतः मानवीय दायित्व और सृजनात्मकता के आयामों को समझना आवश्यक हो जाता है। तकनीकी विकास होने के बाबजूद भी हम संस्कारित संस्कृति बोध से अलग नहीं हो सकते। संस्कृति साहित्य के बिना अधूरी है और साहित्य संस्कृति के बिना।

भूमण्डलीकरण के इस दौर में मानव जीवन अनेक झंझावातों से घिरा हुआ है लेकिन फिर भी यहाँ की गंगा-जमुनी तहजीव की बदौलत हम सबअपनी संस्कृति के इर्द-गिर्द ही विचरण करते हैं। दीपावली में मुसलमानों का अली और रमजान में हिंदुओं का राम भला कैसा रमा हुआ है। राम और रहीम यह दोनों आदर्श सामाजिक समरसता के बलबूते सम्पूर्ण भारतीय जनमानस को सकारात्मक ऊर्जा प्रदान करने का काम करते हैं। प्राचीन से लेकर अर्वाचीन तक मानवीय संस्कृति आज एक ग्लोबल साहित्य का सृजन कर रही है। इस तरह संस्कृति को मानवता का मेरूदंड कहा जा सकता है। वह शिष्टता, शील एवं सौजन्य की आधारशिला है। साहित्य के समस्त अध्येता संस्कृति की संरक्षा करते हैं। भारतीय संस्कृति के शाश्वत मूल्यों के सच्चे ध्वजवाहक के रूप में महात्मा कबीर, लोकनायक तुलसीदास, वात्सल्य सम्राट सूरदास, उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचन्द, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, जयशंकर प्रसाद, प्रकृित के कवि पंतजी, महादेवी वर्मा, अज्ञेय, रांगेय राघव, हिमांशू जोशी आदि हो या फिर सामाजिक सरोकारों से जुड़कर समरसता को स्थापित करने वाले धूमिल, केदारनाथ, दुष्यंत, धर्मवीर भारती, कुँअर बेचैन आदि सभी ने कहीं न कहीं अपनी रचना-धर्मिता के माध्यम से मानवीय मूल्यों को संरक्षित करके विकास की जो धारा प्रवाहित की है वह अपने आप में स्तुत्य है।

भारतीय संस्कृति को भव्यता प्रदान करने वाले समन्वय के विराट कवि तुलसीदास की केवल एक ही कृति रामचरितमानस ने धैर्य, शुचिता, क्षमा, श्रद्धा, निष्ठा और दयालुता का जो उदाहरण पेश किया है। वह अपने में अतुलनीय है। नैतिकता के चरम उत्कर्ष पर तुलसी ने अपने सभी पात्रों को गढ़ने का सफलतम प्रयास किया है। समाज में सौहार्द्र, सामंजस्य एवं शांति स्थापित करने के लिए जिन गुणों

की आवश्यकता होती है वह सभी तुलसी के पात्रों में है। इसीलिए तो नायक श्रीराम को तुलसी ने सत्य के अडिग पक्षधर के रूपमें चित्रित किया है -

सत्य संध पालक श्रुति सेतू।

राम जनमु जग मंगल हेतु ॥[8]

संस्कृति ने सदैव से ही व्यक्ति को एक धरोहर के रूप में सहेज कर रखा है लेकिन फिर भी मन, वचन और कर्म से मिथ्याचारी व्यक्ति ही समाज में भ्रष्टाचार, अन्याय व अनैतिक कर्मों का कर्ता पुरूष बन गया है। सत्य का अनुसंधान करना भारतीय संस्कृति का अपना लक्ष्य रहा है। उसी स्वानुभूति सत्य को महात्मा कबीर ने इस तरह लोगों तक पहुँचाने का प्रयास किया है -

हमारे राम रहीम करीमा, कैसौ अलह राम सति सोई,

बिसमिल मेटी बिसंभर एके, और न दूजा कोई।[9]

भारतीय जनमानस में अनादिकाल से चिंतन-मनन पर गंभीर मंत्रणा होती रही है। इस विषय पर प्रखर एवं प्रज्ञावान लोगों ने समय-समय पर अपना मंतव्य स्पष्ट किया है। आज के दौर में विज्ञान ने अभूतपूर्व चमत्कार किए हैं लेकिन मन पर नियंत्रण एवं उसकी गति मापने वाला कोई यंत्र विकसित नहीं कर सका। लेकिन अध्यात्म से जुड़ा व्यक्ति मन को नियंत्रित करने में सफल सिद्ध हुआ है। भारतीय संस्कृति के प्राणदायी स्वर' असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योतिर्गमय' से ऊर्जा प्राप्त करके किसी के विसंगत जीवन में भी नव आशा का संचार किया जा सकता है। प्रगतिवादी कवि केदारनाथ सिंह की निम्न पंक्तियाँ कितनी आशा से भरी हुई है-मुझे विश्वास है। यह पृथ्वी रहेगी। यदि और कहीं नहीं तो मेरी हड्डियों में। और एक सुबह मैं उठूगा। मैं उठूगा पृथ्वी समेत। जल और कच्छप समेत मैं उठूगा। फिर मैं उठूगा और चल दूँगा उससे मिलने। जिससे वादा है कि मैं मिलूँगा।[10]

साहित्य में अनंत उत्साह एवं ऊर्जा की कोई कमी नहीं है लेकिन हम सबको भी स्वयं की न सोचकर अखिल विश्व की कामना करनी होगी। इसी में सबका कल्याण निहित एवं सुरक्षित है। अज्ञेय जी मनुष्य में अथाह एवं अपार संभावनाएँ तलाशते हुए दिखते हैं। वह प्रतीकात्मक रूप से हारिल पक्षी को उद्बोधित करते हुए कहते हैं-

ऊपर-ऊपर-ऊपर-ऊपर, बढ़ा चीरता चल दिक्मंडल

अनथक पंखों की चोटों से, नभ में एक मचा दे हलचल

तिनका ? तेरे हाथों में है। अमर एक रचना का साधन

तिनका ? तेरे पंजे में है, विधना के प्राणों का स्पंदन।[11]

यहाँ हारिल पक्षी अविरल कर्मशील एवं संघर्षरत, दुर्दमनीय जिजीविषा व असीमित संभावनाओं के अंवेषण व प्राप्ति का प्रतीक बनकर उभरा है यही विश्वास व्यक्ति को प्रत्येक क्षण श्रेष्ठतम कर्मों के लिए नियोजित रखता है। ये स्वर विश्व मानवता के लिए सार्वकालिक, सार्वभौमिक तथा शाश्वत संदेश दे जाते हैं।

अध्ययन का उद्देश्य

अंततः यह कहा जा सकता है कि मानवीय विकास-यात्रा का प्रस्थान बिंदु संस्कृति से ही शुरू होता है तथा यहीं से समस्त सांस्कृतिक मनन-चिंतन अपने वास्तविक बिंदु तक पहुँचते हैं। इस शोध आलेख का मुख्य उद्देश्य मनुष्य और मनुष्यता से बढ़कर कुछ भी नहीं है तथा मनुष्य को मनुष्य बनाने का काम संस्कृति ही करती है, यह सिद्ध करना रहा है। भारतीय संस्कृति विश्वकल्याण की कामना करती है। अतः कहा भी गया है - 'सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः' यह भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र है। भारतीय संस्कृति की यह सदैव से भावना रही है कि सम्पूर्ण विश्व सभ्य एवं सुसंस्कृत हो तथा अखिल विश्व में मैत्री भाव बना रहे। सन्मार्ग का अनुसरण, शोषित-पीड़ितों के प्रति सहानुभूति, सामाजिक समरसता एवं सद्भाव कायम रखते हुए हम सभी को अपने दायित्वों का सफलतम निर्वहन करना होगा तभी संस्कृति और साहित्य का उद्देश्य अपने आप में सार्थक सिद्ध होगा।

निष्कर्ष

समग्र रूप से यह कहा जा सकता है कि संस्कृति और समाज को साहित्य ने जो दिशा प्रदान की है वह अपने आप में बहुत ही मौलिक एवं प्रासंगिक है। वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना हमारी संस्कृति और साहित्य को और अनूठा व अनुपम बना देती है। साहित्य समाज के मानसिक एवं सांस्कृतिक उन्नति एवं विकास का साक्षी है। अतः स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि पूरी दुनिया से हमारी संस्कृति बेजोड़ एवं अनूठी है, क्योंकि हम लोग 'साहित्य समाज का दर्पण है' को आत्मसात् करके कार्य को परिणति देने का कार्य करते हैं।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. *निर्गुण काव्य की सांस्कृतिक भूमिका - डा0 रामसजन पाण्डेय, पृष्ठ सं0 - 11*
2. *संस्कृति और साहित्य - डा0 वासुदेव शरण अग्रवाल, पृष्ठ सं0 - 03*
3. *संस्कृति के स्वर - महादेवी वर्मा, पृष्ठ सं0-74*
4. *अशोक के फूल - डा0 हजारी प्रसाद द्विवेदी, पृष्ठ सं0-58*
5. *संस्कृति के चार अध्याय - रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ सं0-15*
6. *संस्कृति के चार अध्याय - रामधारी सिंह दिनकर, पृष्ठ सं0-108*
7. *ऋग्वेद, 1/89/1*
8. *रामचरितमानस-अयोध्याकांड-तुलसीदास, दोहा संख्या254/3, गीताप्रेस, गोरखपुर*
9. *कबीर ग्रंथावली- संपादक- श्यामसुंदरदास, पदावली संख्या 58, पृष्ठ सं0-164*
10. *यहाँ से देखो, पृथ्वी रहेगी-केदारनाथ सिंह, पृष्ठ सं0 - 25*
11. *पूर्वा- सच्चिदानंद हीरानंद वात्स्यायन 'अज्ञेय', पृष्ठ सं0 - 125*